भारत के विशेष सन्दर्भ में सतत विकास, पर्यावरण एवं वर्तमान जीवन शैली

डॉ ब्रजेश श्रीवास्तव

असिस्टेंट प्रोफेसर अर्थशास्त्र

राजकीय महाविद्यालय

मानिकपुर चित्रकूट

शोध सारांश

सतत विकास (Sustainable Development) का अर्थ है वर्तमान पीढ़ियों की जरूरतों को पूरा करना, बिना भविष्य की पीढ़ियों की आवश्यकताओं से समझौता किए। यह पर्यावरण संरक्षण, आर्थिक विकास और सामाजिक समानता के बीच संतुलन बनाता है। निःसंदेह जीवन शैली से संबंधित पसंद और व्यवहारों का पर्यावरण पर गहरा प्रभाव पड़ता है। आज की उपभोक्तावादी जीवनशैली संसाधनों का अत्यधिक दोहन कर रही है, जिसके गंभीर परिणाम मानव जीवन शैली पर पड़ रहे है अतः पर्यावरण के अनुकूल आदतों को अपनाना अनिवार्य हो गया है।

मुख्य शब्द – सतत विकास , पर्यावरण संरक्षण , जीवन शैली

प्रस्तावना

वृद्धि और विकास विभिन्न समाजों के स्थायी लक्ष्य हैं। लेकिन, एक सवाल है: हम विकास तक कैसे पहुंच सकते हैं? द्वितीय विश्व युद्ध के बाद सामाजिक और आर्थिक स्थिति में सुधार को एक प्रमुख लक्ष्य के रूप में अपनाया गया। इसलिए विकसित देश आर्थिक विकास, समानता और सामाजिक न्याय में ही विकास और नवप्रवर्तन का रास्ता खोजते हैं। इस दृष्टिकोण के अनुसार, विकास तब होता है जब सामाजिक और आर्थिक विकास सतत रहता है। सतत विकास की सबसे आम परिभाषा है: ''स्थायी विकास वह विकास है जो भविष्य की पीढ़ियों की अपनी जरूरतों को पूरा करने की क्षमता से समझौता किए बिना वर्तमान की जरूरतों को पूरा करता है'' ।

इस परिभाषा के अनुसार, सतत विकास के लिए निम्न कारक महत्वपूर्ण हैरू गरीबी, स्वास्थ्य, शिक्षा, जनसांख्यिकीय विशेषताएं, पर्यावरण और प्राकृतिक कारक, आर्थिक विकास, जलवायु, राष्ट्रीय उत्पादन और साथ ही खुशी या कल्याण। परंपरागत रूप से, आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय विकास सतत विकास के सबसे महत्वपूर्ण कारक हैं। इन कारकों का एक दूसरे के साथ गहरा संबंध है।

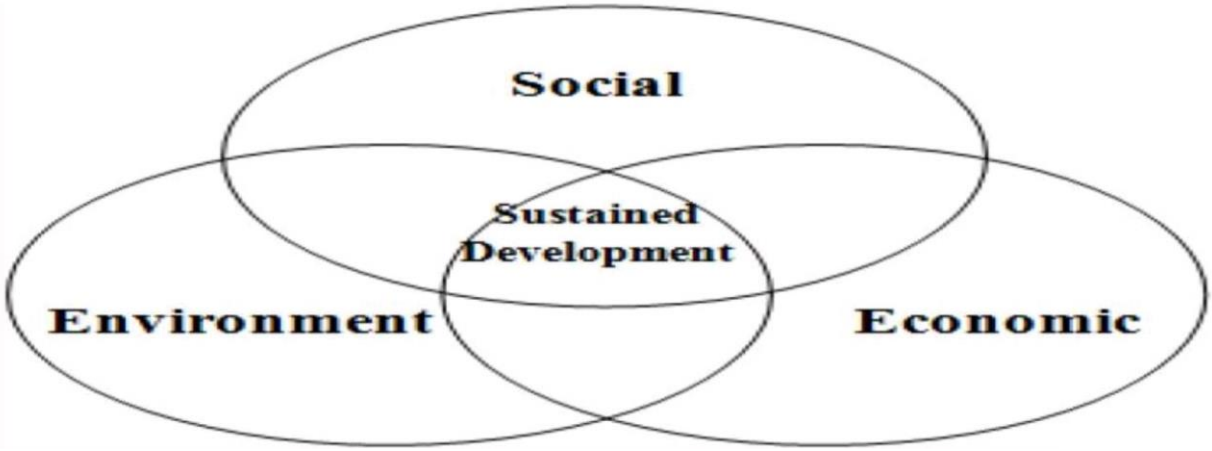

1. आर्थिकः टिकाऊ अर्थव्यवस्था से उत्पादन में वृद्धि होती है, जनसंख्या के लिए बेहतर और उपयोगी सेवाएँ मिलती हैं और इससे अर्थव्यवस्था का असंतुलन कम होता है।

2. सामाजिक : टिकाऊ समाज में निम्नलिखित विशेषताएं है : न्याय, उपयोगी सामाजिक सेवाएं, लैंगिक समानता, राजनीतिक स्थिरता, सुरक्षा और सहयोग।

3. पर्यावरण टिकाऊ पर्यावरण संसाधनों को बनाए रखने और बनाए रखने और नवीकरणीय संसाधनों को बर्बाद करने से रोकने में मदद करता है ।

जीवनशैली किसी देश के नागरिकों और सांस्कृतिक विशेषताओं पर निर्भर करती है। वर्तमान वैश्वीकरण के दौर में जीवन शैली को स्थानीय नहीं माना जा सकता है। स्पष्ट है कि जीवन शैली राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक संदर्भ के रूप में हो सकती है ।

सतत विकास को समझने के लिए जीवन शैली की स्पष्ट परिभाषा प्रदान करना आवश्यक है। विभिन्न परिभाषाएँ हैं, उनमें से कुछ इस प्रकार हैः

1. जीवन शैली लोगों, परिवारों और समाज द्वारा जीने का तरीका है।

2. जीवन शैली व्यवहारों का एक समूह है जो लोगों, परिवारों और समाज द्वारा विभिन्न स्थितियों (शारीरिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और आर्थिक) में प्रस्तुत किया जाता है।

3. जीवन शैली आदतों की एक शाखा है जिसमें सामाजिक बुनियादी सिद्धांत शामिल हैं।

इसलिए, यह कहा जा सकता है कि जीवन शैली में जीवन जीने के विशिष्ट लेकिन स्पष्ट तरीके शामिल हैं जो कार्यों, संचार और विश्वासों में निर्धारित होते हैं। किंतु विकास की अंध दौड़ में जो मुख्य बात है – प्रकृति से तालमेल । वर्तमान जीवन शैली पश्चिमोन्मुख् है । हम प्राकृतिक विकास पर भौतिक विकास को हावी होने दे रहे है। पर्यावरण को बिगाड़ने और आबो-हवा को इस हद तक जहरीली बनाने के लिए आज के दौर की जीवनचर्या भी कम जिम्मेदार नहीं हैं। इसे दिखावे की संस्कृति कहें या आरामतलबी जुनून। अब जरूरतों पर इच्छाएँ भारी पड़ रही हैं। बिना जरूरत के वाहन खरीदने और कदम भर भी पैदल न चलने की जीवनशैली हमारे भविष्य पर ही प्रश्नचिन्ह लगा रही है। घर में हर जरूरी – गैर–जरूरी सुविधा को जुटाना अब महानगरों में ही नहीं गाँवों कस्बों में भी आम है। गौर करने वाली बात है कि ऐसी सुख–सुविधाओं के आदी हो चले लोग पहले इन चीजों के बिना भी सहज जीवन जीया करते थे। आधुनिक जीवनशैली से जुड़ी ऐसे तमाम आदमी धरती पर अतिरिक्त बोझ बढ़ाने वाले तो हैं ही, पर्यावरण को भी काफी हद दर्जे

तक नुकसान पहुँचा रहे हैं। दरअसल, भोगवादी संस्कृति वाली इंसानी आदतों में भी कुदरत को कुपित किया है। असीमित मानवीय जरूरतों और गतिविधियों ने धरती, जल और वायु सभी को प्रदूषित कर दिया है। जहाँ पेड़–पौधों के पूजन की परम्परा रही है वहाँ पहाड़ से लेकर रेगिस्तान तक, देश के हर हिस्से में प्राकृतिक संसाधनों का जमकर दोहन हो रहा है। जबकि पर्यावरण सहेजने के लिए जागरूकता और जिम्मेदारी का भाव रोजमर्रा की आदतों का हिस्सा भी जरूरी है। इस जिम्मेदारी का सबसे पहला पड़ाव पर्यावरण के दोहन को रोकने का ही है।

विचारणीय है कि जिस भारतीय संस्कृति में रि–साइकिल न हो सकने वाली किसी चीज के प्रयोग का प्रावधान ही नहीं था, वहाँ अब यूज एंड थ्रो कल्चर तेजी से बढ़ रहा है। धरती की छाती पर बढ़ते कचरे के पहाड़ इसका सबूत हैं। यूज एंड थ्रो की संस्कृति ने प्लास्टिक की खपत भी बढ़ा दी है। सामाजिक आयोजनों से लेकर घरेलू जरूरतों तक काम में लिए जाने वाले ऐसे अधिकतर उत्पाद प्लास्टिक के ही बने होते हैं। कुछ समय पहले सामने आए अध्ययन के मुताबिक वर्ष 2047 तक भारत में कूड़े का उत्पादन पाँच गुना बढ़ जाएगा। जिस देश में कूड़ा प्रबन्धन पहले से ही बड़ी समस्या बनी हुई है, वहाँ आने वाले समय में कचरे का उत्पादन और बढ़ना चिंतनीय है। एक ओर विकास और औद्योगीकीकरण के नाम पर प्राकृतिक संसाधनों का दोहन हुआ है तो दूसरी ओर बदलती दिनचर्या ने धरती की आबोहवा को बदलने का काम किया है। हम प्रकृति से लेना तो सीख गए हैं पर उसे कुछ भी लौटाने की समझ ही गुम है। निःसंदेह प्रकृति मनुष्य की आवश्यकताओं की पूर्ति का सामर्थ्य रखती है पर इंसान तो सब कुछ छीनने में लगा है। होना तो चाहिए था भारत जैसे तेजी से बढ़ती आबादी वाले देश में प्रकृति को सहेजने के अतिरिक्त प्रयास किए जाते।

सेंटर फॉर ग्लोबल डेवलपमेंट की एक चेतावनी के अनुसार यदि पेड़ के घटने की रफ्तार इसी गति से जारी रही तो वर्ष 2050 तक विश्व मानचित्र से भारत के क्षेत्रफल के बराबर जंगल समाप्त हो जाएँगे। पेड़ नहीं बचेंगे तो धरती का तापमान भी तेजी से बढ़ेगा द्य साथ ही बढ़ता कार्बन उत्सर्जन पर्यावरण में और गर्मी बढ़ाएगा। गौरतलब है कि हमारे यहाँ बढ़ते आर्थिक विकास, आर्थिक समृद्धि, सुविधासम्पन्न जीवनशैली, शहरीकरण और प्रति व्यक्ति ऊर्जा की बढ़ती खपत हर साल कार्बन उत्सर्जन बढ़ा रही है। ऊर्जा की बढ़ती खपत का कारण व्यावसायिक उपयोग के अलावा दिन–रात चलने वाले घरेलू उपकरण और बढ़ते इलेक्ट्रिकल वाहन आदि भी हैं। यही वजह है कि बीते कुछ बरसों में पर्यावरण असन्तुलन की जो स्थिति पैदा हुई है, अब उसके नतीजे प्रत्यक्ष रूप से सामने आने लगे हैं। बढ़ती गर्मी तो जानलेवा साबित हो रही है अब ठंड भी बेमौसम पड़ती है। साथ ही प्राकृतिक आपदाएँ भी बढ़ रही हैं।

सुख–सुविधाएँ जुटाते हुए इंसान यह भूल कर रहा है कि पर्यावरण का संरक्षण खुद उसके अस्तित्व को बचाने के लिए भी जरूरी है। यह सामुदायिक चिन्ता का विषय है। जिसके लिए साझी जिम्मेदारी निभाने की सोच जरूरी है। आमजन भौतिक सम्पदा जुटाने की लालसा वाली मानसिकता से ऊपर उठकर भी इसमें बड़ा योगदान दे सकते हैं। सहज जीवनशैली अपनाकर प्रकृति के फीके पड़ रहे रंगों को सहेज सकते हैं। सरकारी प्रयास अपनी जगह हैं पर पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने वाले क्रियाकलापों से बचना और प्रकृति पर अपनी जरूरतों का बोझ न बढ़ाना भी पर्यावरण को बचाने में काफी मददगार साबित हो सकते है। अतः पर्यावरण, सतत विकास और वर्तमान जीवन शैली में सामंजस्य आवश्यक है।

संदर्भिका

1- Bossel H. (1999). *Indicators for sustainable development: theory, method, application.* International Institute for Sustainable Development, Canada, pp. 2-10.

2- World Commission on Environment and Development (1987).*Our common future.* Oxford University Press, Oxford, p. 27.